International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

भारतीय ज्ञान परंपराओं में निहित जेंडर अवधारणाओं में ट्रांसजेंडर पहचान का अध्ययन

ललित कुमार[1], अखिलेश कुमार गौतम[2]

[1]पीएचडी, स्वतंत्र शोधकर्ता
[2]सहायक प्रोफेसर, शिक्षा संकाय, स्वामी रामतीर्थ परिसर, हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय

सारांश
भारतीय समाज अपने अंदर ज्ञान की उत्कृष्ठ पूँजी को निहित किए हुए है और इसके प्रमाण हमें दैनिक जीवन एवं अन्य क्षेत्रों जैसे धातुकर्म, आभूषण, कृषि, खानपान इत्यादि में स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। भारतीय भाषाओं में समृद्ध साहित्य परंपरा आदि काल से रही है और निर्बाध रूप से अभी भी जारी है। जहाँ एक तरफ भारतीय भाषाओं में स्त्री और पुरुष के साथ ही तृतीय लिंग उपस्थिति है, वहीं भारतीय समाज में तृतीय जेंडर अर्थात ट्रांसजेंडर की उपस्थिति स्पष्ट रूप से नज़र आती है। यह इस बात की तरफ इशारा करती है कि भारतीय ज्ञान परंपराओं के तहत जेंडर अवधारणाओं का विकास उच्च स्तर पर था। प्रस्तुत शोधपत्र भारतीय ज्ञान परंपरा के विभिन्न स्रोतों में निहित जेंडर अवधारणाओं में ट्रांसजेंडर पहचान का अध्ययन प्रस्तुत करता है। यह शोधपत्र जेंडर अवधारणाओं में उपस्थित ट्रांसजेंडर पहचान का उसी रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास करता है।

प्रमुख शब्द: ज्ञान, परंपरा, जेंडर, अवधारणा, ट्रांसजेंडर, भाषा, साहित्य।

प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति और सभ्यता में पीढ़ी दर पीढ़ी अर्जित ज्ञान की समृद्ध परंपरा रही है। यह आदिकाल से निरबाध रूप से चली आ रही है। यह ज्ञान विज्ञान विभिन्न रूपों में छिपा हुआ है और इसे सामने लाने की आवश्यकता लंबे समय से महसूस की जा रही है। इस विचार से प्ररित होकर यह जानने और समझने का प्रयास जा रहा है कि भारतीय ज्ञान परम्पराओं में निहित जेंडर अवधारणाओं के तहत ट्रांसजेंडर पहचान को किस रूप में देखा और समझा गया है। भारतीय समाज में ट्रांसजेंडर पहचान की उपस्थिति स्पष्ट रूप से दिखाई देती है और वह पहचान स्त्री और पुरुष की जेंडर पहचान से अलग तीसरे जेंडर के रूप में एक अलग स्थान रखती है। यह पहचान हमें हिजड़ा, किन्नर, अर्द्धनारीश्वरी, जोग्ति-जोग्ता, अरावनी,थिरुनंगी, कोथि, शिव-शक्ति इत्यादि के रूप में भारत के विभिन्न क्षेत्रों में दिखाई देती हैं। यह इस बात की और संकेत करती है कि भारतीय समाज की जेंडर समझ में स्त्री और पुरुष के साथ ही ट्रांसजेंडर की गहन पहचान एवं समझ नई नहीं है। यहाँ पर हम विभिन्न स्रोतों के माध्यम से भारतीय ज्ञान परम्पराओं में निहित जेंडर अवधारणाओं में ट्रांसजेंडर पहचान का अध्ययन करेंगे। इन स्रोतों में साहित्यिक स्रोत सबसे प्रमुख हैं। साहित्यिक स्रोतों में दो प्रकार के स्रोत प्रमुख हैं: धार्मिक ग्रंथ एवं साहित्यिक ग्रंथ। हम अपने अध्ययन के लिए प्रमुख रूप से तीन धर्मों के धर्म ग्रन्थों का उपयोग यहाँ पर कर रहे हैं: ब्राह्मण धर्म ग्रंथ, बौद्ध धर्म ग्रंथ एवं जैन धर्मग्रंथ। इनके अतिरिक्त हम अन्य प्राचीन साहित्यिक ग्रन्थों का उपयोग भी करेंगे।

ब्राह्मण दर्शन की जेंडर अवधारणाओं में ट्रांसजेंडर पहचान

प्राचीनतम स्रोतों में ब्राह्मण धर्म प्रमुख हैं। ऐसा माना जाता है कि ट्रांसजेंडर के विषय में सबसे प्राचीन उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है। जहाँ पर विकृत भी प्रकृति के रूप में वर्णित किया गया है परन्तु हमारे पास उस उल्लेख का कोई ठोस प्रमाण उपलब्ध नहीं है। सबसे अधिक प्रामाणिक उल्लेख हमें अथर्ववेद में मिलता है। अथर्ववेद में बधियाकरण के लिए "वधरी" शब्द का प्रयोग किया गया है (अथर्ववेद,6°138°5)। स्पष्ट रूप से जेंडर को इंगित करने के लिए हमें विभिन्न शब्दों का उपयोग देखने को मिलता है जैसे अथर्ववेद में तीसरे जेंडर यानि ट्रांसजेंडर के लिए "क्लीवै'वा" शब्द का प्रयोग किया गया है (अथर्ववेद,8°6°7-11)। ट्रांसजेंडर के विषय में सबसे अधिक प्रामाणिक एवं स्पष्ट विवरण शतपथ ब्राह्मण में मिलता है। शतपथ ब्राह्मण में ट्रांसजेंडर के लिए "पुरुसिया" शब्द का उपयोग किया गया है। पुरुसिया की विशेषता को वर्णित करते हुए कहा गया है कि वह "न स्त्री है, न ही पुरुष है" (शतपथ ब्राह्मण, 5°1°2°14)। शतपथ ब्राह्मण के उल्लेख से यह स्पष्ट हो जाता है कि उस काल में समाज में ट्रांसजेंडर पहचान स्पष्ट रूप से इंगित हो चुकी थी। इतिहासकारों के अनुसार शतपथ ब्राह्मण का रचना काल 800 वर्ष ईसा पूर्व माना गया है। अध्ययन के दौरान हमने पाया कि संस्कृत ग्रन्थों (साहित्यिक एवं धर्म ग्रन्थों) में ट्रांसजेंडर के लिए विभिन्न शब्दों का प्रयोग किया गया है। उदाहरण के लिए , "तृतीय प्रकृति" का प्रयोग हमें कामसूत्र(2°9), महाभारत (4°59), उभयाभिसारिका (भाग-2) में मिलता है। वहीं "स्त्रिरूपणी या स्त्रीरूपम" शब्द का उपयोग भी ट्रांसजेंडर के लिए कामसूत्र (2°9), और महाभारत (5°189°5) में मिलता है। जबकि ट्रांसजेंडर के लिए "नपुंसक" शब्द का उपयोग नाट्यशास्त्र(24°68-69) में मिलता है। ट्रांसजेंडर के लिए संस्कृत ग्रन्थों में विभिन्न शब्दों का उपयोग इस बात की तरफ इशारा करता है कि शायद इन शब्दों का प्रयोग ट्रांसजेंडर पहचान के अंदर निहित गुण आधारित भिन्नताओं को प्रदर्शित करने हेतु किया गया होगा। इस विषय पर और अधिक स्पष्टता हेतु हमें तात्कालिक जेंडर धारणाओं को समझना होगा।

500 ईस्वी पूर्व से 300 ईस्वी पूर्व के बीच हमें विशेष रूप से संस्कृत भाषा विज्ञान के विभिन्न आयामों का तेज़ विकास देखने को मिलता है जैसे इस समय भाषा विज्ञान के महत्वपूर्ण ग्रंथ निरुक्त का विकास हो चुका था। निरुक्त के अध्ययन से यह स्पष्ट रूप से प्रकट होता है कि इस समय जेंडर की दो अवधारणाएँ परिपकव्य हो चुकी थी: व्याकरणिक लिंग एवं जैविक लिंग। समान्यतः जेंडर और लिंग को एक दूसरे के समानार्थी माना जाता है लेकिन ये दोनों समानार्थी नहीं होते हैं। लिंग मूलतः जैविक रूप से प्रजनन क्षमता को प्रदर्शित करता है जबकि जेंडर लिंग आधारित सामाजिक भूमिकाओं को प्रकट करता है। "लिंग" का मूल अर्थ कारक चिन्ह (निरुक्त:1°17) था लेकिन बाद के काल में इसका संबंध प्रजनन अंग एवं यौनिक क्षमता के साथ जुड़ गया। व्याकरणिक दृष्टि से "लिंग" को जेंडर के पद के रूप में स्वीकार कर लिया गया। बाद के कालों में जेंडर को निर्धारित करने का आधार प्रजनन क्षमता को मान लिया गया। इसके अतिरिक्त संस्कृत व्याकरण ग्रंथ महाभाष्य में स्पष्ट रूप से ट्रांसजेंडर को परिभाषित करे हुए उल्लेखित किया गया है कि "जिस इंसान के लंबे बाल और स्तन है वह स्त्री है। जिस इंसान के सम्पूर्ण शरीर पर बाल है वह पुरुष है। किसी इंसान में इन दोनों ही गुणों का अभाव है वह ना स्त्री है, ना ही पुरुष है"(महाभाष्य:4°1°3)। निरुक्त एवं महाभाष्य के वर्णनों से यह स्पष्ट हो जाता है कि तत्कालीन समय में जेंडर अवधारणा में प्रजनन अंग एवं प्रजनन क्षमता आधारी रूप ले चुकी थी। कुछ अन्य ग्रंथ है जो विस्तार से ट्रांसजेंडर पहचान को प्रस्तुत करते हैं।

संस्कृत चिकित्सा ग्रंथ ट्रांसजेंडर पहचान पर विस्तार से चर्चा करते हैं। इन ग्रन्थों के अध्ययन से एक विशेष बात यह निकल कर आता है कि समय के साथ-साथ स्त्री एवं पुरुष की जेंडर पहचान से इत्तर पहचानों के लिए प्रयुक्त शब्दों की संख्या बढ़ती चली जाती है। ट्रांसजेंडर पहचान के विषय में सुश्रुत संहिता विस्तार से चर्चा प्रस्तुत करती है। सुश्रुत संहिता में जेंडर एवं यौन आचरण के लिए "क्लीव" शब्द का प्रयोग किया है। सुश्रुत संहिता में पाँच प्रकार के कलीव का वर्णन प्रस्तुत किया गया है: असेक्या, सौगंधिका, कुंभिका, ईर्ष्याका(सुश्रुत संहिता:3°2°44-45) और षंड (सुश्रुत संहिता: 3°2°43)। असेक्या, सौगंधिका, कुंभिका और ईर्ष्याका का संबंध समलैंगिक प्रवृति रखने वाले पुरुषों से है

जबकि षंड को एक ऐसे पुरुष के रूप में परिभाषित किया गया है जिसके व्यवहार में स्त्री गुणों की प्रचुरता पाई जाती हैं। दूसरा महत्वपूर्ण संस्कृत चिकित्सा ग्रंथ चरक संहिता है। चरक संहिता में नपुंसक वर्ग पर और अधिक विस्तार से चर्चा की गई है। चरक संहिता में आठ प्रकार के नपुंसकों का वर्णन मिलता है। ये हैं पवानेन्द्रिय, द्विरेतास, वक्री, वातिका, ईर्ष्याभीरती, संस्कारवाही, नरषंड और नारीषंड(चरक संहिता: 4°2)। चरक संहिता में इन आठों के अतिरिक्त दो अन्य प्रकार के नपुंसकों का भी वर्णन मिलता है : वर्ता और ऋणपुत्रिका(चरक संहिता:4°2)। चरक संहिता में नपुंसकों के उनके गुणों एवं शारीरिक अयोग्यताओं के आधार पर वर्गीकृत एवं वर्णित किया गया है। महत्वपूर्ण बात यह है कि चरक संहिता में वर्णित नरषंड और नारीषंड, स्त्री-पुरुष की द्वि-जेंडर वर्गीकरण से बाहर ट्रांसजेंडर पहचान को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करते है। इन चिकित्सा ग्रन्थों के अतिरिक्त दो अहम ग्रंथ हैं जो ट्रांसजेंडर पहचान पर अहम जानकारी प्रदान करते हैं। ये ग्रंथ हैं: कामसूत्र और नाट्यशास्त्र। कामसूत्र की रचना वात्सयायन ने लगभग दूसरी शताब्दी ईस्वी में की थी। कामसूत्र में जेंडर के लिए प्रकृति शब्द का उपयोग मिलता है। कामसूत्र के अनुसार तीन प्रकार की प्रकृति अर्थात जेंडर होते हैं: पुरुष प्रकृति, स्त्री प्रकृति और तृतीय प्रकृति (कामसूत्र:2°9)। महत्वपूर्ण बात यह है कि कामसूत्र में तीनों प्रकृतियों के व्यवहारिक आचरण के साथ-साथ यौनिक आचरण पर भी विस्तार से चर्चा की गई है। नाट्यशास्त्र की रचना भरत मुनि द्वारा की गई है। नाट्यशास्त्र का मुख्य विषय रंगमंच है और यह अभिनय के विभीन्न आयामों को प्रस्तुत करता है। नाट्यशास्त्र के चौबीसवें अध्याय में जेंडर आधारित नाट्य अभिनय एवं भूमिकाओं पर विस्तार से चर्चा की गई है। कामसूत्र की तरह ही नाट्यशास्त्र में भी जेंडर के लिए प्रकृति शब्द का उपयोग मिलता है। इस अध्याय में पुरुष प्रकृति, स्त्री प्रकृति और तृतीय प्रकृति (नाट्यशास्त्र: 24) के रूप में जेंडर पहचानों की अलग-अलग अभिनय भूमिकाओं का विस्तारपूर्वक वर्णन प्राप्त होता है। उपरोक्त ग्रन्थों के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि उस काल में भारतीय समाज में स्त्री एवं पुरुष से अलग ट्रांसजेंडर पहचान मुख्य जेंडर धारणा का अंग बन चुकी थी। संस्कृत ग्रंथ धर्मसूत्र ट्रांसजेंडर पहचान के विषय में विस्तृत जानकारी उपलब्ध करवाते हैं।

सामाजिक अध्ययन की दृष्टि से संस्कृत धर्मशास्त्रों और धर्मसूतत्रों का विशेष महत्व है क्योंकि धर्मशास्त्रों एवं धर्मसूत्रों आचार-विचार संहिताओं के रूप में रची गई हैं। धर्शास्त्रों एवं धर्मसूत्रों के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि इनकी रचना उद्देश्य समाज को दिशा देना था। इनके लिए विभिन्न प्रकार के नियमों को धर्मशास्त्रों एवं धर्मसूत्रों के माध्यम से व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत किया गया है। धर्मशास्त्रों एवं धर्मसूत्रों के अध्ययन से हमें तात्कालिक समाज एवं उस काल के आचार-विचार के विषय में भी पता चलता है। धर्मशास्त्रों में मनुस्मृति का विशेष स्थान माना जाता है। मनुस्मृति तीसरे जेंडर अर्थात ट्रांसजेंडर को स्पष्ट रूप से परिभाषित करती है:

"जैसे एक तृतीय लिंग पुरुष स्त्री के साथ उत्पादक नहीं है.....वैसे ही वेदों से अनभिज्ञ ब्राह्मण अनुपयोगी है" (मनुस्मृति: 2°158)।

मनुस्मृति में ट्रांसजेंडर के जन्म के विषय में भी विचार प्रस्तुत किए गए हैं:

" एक पुरुष बच्चे का जन्म पुरुष बीज़ की अधिकता से होता है, एक स्त्री बच्चे का जन्म स्त्री बीज़ की अधिकता से होता है, जब पुरुष बीज़ और स्त्री बीज़ समान मात्रा में होते हैं तो नपुंसक (ट्रांसजेंडर) या लड़का और लड़की जुड़वा होते हैं या अगर दोनों कमज़ोर हैं या अल्प मात्रा में हैं, तो गर्भधारण में विफलता का परिणाम होता है" (मनुस्मृति:3°49)।

उपरोक्त उदाहरणों से दो महत्वपूर्ण बातें यह निकल कर आती है कि मनुस्मृति में ट्रांसजेंडर पहचान के लिए नपुंसक पद का उपयोग मिलता है और उसका आधार प्रजनन क्षमता को माना गया है। दूसरी अहम बात यह निकल कर आती है कि ट्रांसजेंडर का जन्म का कारण जैविक माना गया है। इसका अर्थ यह है की मनुस्मृति में जेंडर की पहचान को प्रजनन अंग एवं प्रजनन क्षमता पर आधारित मान लिया गया परंतु मनुस्मृति नपुंसक के गुणों एवं विशेषताओं को स्पष्ट नहीं करती है। नारद स्मृति इस विषय पर विस्तार से चर्चा प्रस्तुत करती है। नारद स्मृति में नपुंसक के लिए पंड

शब्द का प्रयोग मिलता है। नारदा स्मृति के स्त्री-पुरुष संबंध अध्याय में चौदह प्रकार के पंड यानि ट्रांसजेंडर का वर्णन उनकी विशेषताओं के साथ किया गया हैं: निसर्ग, वध्री, पक्षा, अभिसपद-गुरोः, रोगत, देव-क्रोधत, ईर्ष्याका, सेव्याका, वातरेतस, मुखेभागा, अक्सीप्ता, मोघबीजा, सलिना और अन्यापति। इनमें से सात को कभी ना ठीक होने वाला और विवाह के लिए अनुपयुक्त बताया गया हैं: निसर्ग, वध्री, ईर्ष्याका,सेव्याका, वातरेतस, मुखेभागा, और अन्यापति। बाकी बचे हुए सात को ठीक किया जा सकता है। यह देखने में आता है की अन्य स्मृति ग्रंथ जैसे आपस्तंबधर्मसूत्र, याज्ञवाल्क्यस्मृति, बौधायनधर्मसूत्र इत्यादि मनुस्मृति का अनुशरण करते हुए प्रतीत होते हैं। पूर्व के संस्कृत ग्रंथों के विपरीत स्मृति ग्रंथों विशेषकर मनुस्मृति में जेंडर को जैविक विशेषताओं के साथ जोड़ कर देखा गया है। इसका अर्थ यह है कि उन्होने जेंडर की अवधारणा को प्रजनन अंग एवं प्रजनन क्षमता पर स्थापति कर दिया।

पूर्व में उपयोग किया जाने वाला पद षंड वर्तमान ट्रांसजेंडर पहचान के अधिक समानार्थी प्रति होता है। चौदहवीं शताब्दी ईस्वी में रचित संस्कृत शब्दकोश शब्द-कल्प-द्रुम में बीस प्रकार के षंड का वर्णन मिलता है। ये बीस षंड हैं: निसर्ग, बद्ध, पक्षा, किलका, सपदी, स्तब्धा, ईर्ष्याका, सेव्याका, अक्सीप्ता, मोघबीज, सलिना, अन्यापति, कुंभिका, पंड, नस्ता, असेक्य, सौगंधिका, और षंड। शब्द-कल्प-द्रुम में वर्णित षंड के सभी प्रकार अलग-अलग ग्रंथों से एकत्रित किए गए हैं(शब्द-कल्प-द्रुम,1967)। इसका अर्थ यह है कि संस्कृत ग्रंथों में तृतीय प्रकृति के तहत उभयलिंगी, समलैंगिक और ट्रांसजेंडर तीनों को समाहित करके देखा गया है। सभी ग्रंथों के क्रमिक अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि संस्कृत ग्रंथों में जेंडर की अवधारणा का विकास एक लंबे काल क्रम में हुआ है और तत्कालीन विद्वानों को ट्रांसजेंडर पहचान का बोध था। यहाँ पर यह भी स्पष्ट करना अत्यंत आवश्यक है कि संस्कृत विद्वानों की ट्रांसजेंडर पहचान की समझ वर्तमान में प्रचलित ट्रांसजेंडर पहचान के काफ़ी समानार्थी पाई जाती है परंतु व्यवहारिक रूप में हम पाते हैं कि समाज में जैविक प्रजनन अंग एवं क्षमता आधारित जेंडर अवधारणा का बोलबोला नज़र आता है। संस्कृत धर्म ग्रंथों एवं अन्य ग्रंथों के अतिरिक्त बौद्ध दर्शन एवं जैन दर्शन में भी हमें जेंडर की अवधारणाओं की उपस्थिति मिलती है।

बौद्ध दर्शन की जेंडर अवधारणाओं में ट्रांसजेंडर पहचान

बौद्ध धर्म दर्शन का भारतीय ज्ञान परंपरा में महत्वपूर्ण स्थान है। बौद्ध धर्मग्रंथों के अध्ययन से भारतीय जेंडर की अवधारणा के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। बौद्ध धर्म ग्रंथ विनयपिटक एक महत्वपूर्ण धर्मग्रंथ है। विनयपिटक बौद्ध भिक्षुओं के लिए बौद्ध संघ के अंदर एवं बाहरी समाज में बौद्ध भिक्षुओं के व्यवहार एवं जीवन जीने की मार्गदर्शिका है। विनयपिटक के महावग्गा भाग में बौद्ध भिक्षुओं के यौनाचर से संबंधित नियम दिए हुए हैं। इसी भाग के अध्ययन से हमें बौद्ध धर्म दर्शन में उपस्थित जेंडर अवधारणा के विषय में पता चलता है। महावग्गा में चार प्रकार के जेंडर स्वरूपों का वर्णन किया गया है: पुरुष, स्त्री, उभतोव्यंजनका और पंडक। बौद्ध भिक्षुओं को इन चारों ही के साथ यौनाचार की मनाही की गई है(महावग्गा: 1616869, ज्ञात्सो:2003)। पाली ग्रंथ सोसाइटी की पाली-इंग्लिश शब्दकोश में उभतोव्यंजनका को उभयलिंगी वर्णित किया गया है(डेविस, 1975:154)। बौद्ध ग्रंथ अभिधम्मपिटक में दो प्रकार के उभतोव्यंजनका: इत्थी- उभतोव्यंजनका और पूरिसा-उभतोव्यंजनका का वर्णन मिलता है। इनके इत्तर चौथी जेंडर पहचान पंडक है। पंडक को यूनक्स और दुर्बल के रूप में वर्णित किया गया है(डेविस,1975:404)। अभिधम्मपिटक में पाँच तरह के पंडकों का वर्णन मिलता है: अस्सीत्तकपंडक, उस्सूयपंडक, ओपक्कामिपंडक, पकखापंडक और नपुंसकपंडक। बौद्ध ग्रन्थों में पंडक पद का उपयोग ट्रांसजेंडर पहचान के लिए किया गया है। उपरोक्त सभी पंडकों को प्रजनन क्षमता एवं गुणों के आधार पर परिभाषित किया गया है। बौद्ध दर्शन में भी हमें ब्राह्मण संस्कृत ग्रंथों की तरह ही जेंडर की अवधारणा का आधार जैविक प्रजनन अंग एवं प्रजनन क्षमता को माना गया है। प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा में जैन दर्शन का महत्वपूर्ण स्थान है।

जैन धर्मग्रंथों की जेंडर अवधारणाओं में ट्रांसजेंडर पहचान

जैन धर्मग्रंथों में ब्राह्मण संस्कृत ग्रंथों और बौद्ध धर्म ग्रंथों ने जेंडर निर्धारण की अवधारणा को प्रजनन अंग एवं क्षमता आधारित होने के विचार को खारिज कर दिया। जैन परंपरा के अनुसार जैविक लिंग जेंडर के निर्धारण का मूल आधार नहीं होता। जैन परंपरा में दो प्रकार के जेंडर प्रकारों का वर्णन प्राप्त होता है: द्रव्यलिंग और भावलिंग। द्रव्यलिंग जैविक लिंग अर्थात प्राथमिक यौनिक प्रजनन अंग एवं क्षमताओं को प्रस्तुत करता है जबकि भावलिंग किसी व्यक्ति की मनोस्थिति एवं मनोव्यवहार को प्रस्तुत करता है (ज्वेल्लिंग एवं स्वीट,1996, रेड्डी,2005)। यहाँ पर भावलिंग वास्तव में किसी व्यक्ति के द्वारा अपनाए गए जेंडर आधारित व्यवहार की तरफ इशारा करता है। इसका अर्थ यह निकलता है कि व्यक्ति की जैविक लिंग पहचान से अलग उसकी भावात्मक या व्यवहारिक पहचान हो सकती है। जैन दर्शन एक अत्यंत महत्वपूर्ण पक्ष यह उजागर करता है कि जेंडर पहचान पूरी तरह से अर्जित उपलब्धि है और इसका कोई आवश्यक आधार जैविक प्रजनन लिंग नहीं है।

निष्कर्ष

भारतीय ज्ञान परंपरा के तहत जेंडर की अवधारणा के अंदर ट्रांसजेंडर पहचान को जानने के उद्देश्य से शोधार्थी ने प्राचीन संस्कृत ग्रंथ जिनमें धार्मिक एवं अन्य साहित्यिक रचनाओं, बौद्ध धर्म एवं दर्शन ग्रंथों और जैन धर्म एवं दर्शन ग्रंथों का अध्ययन किया। हम पाते हैं कि वर्तमान ट्रांसजेंडर पहचान के जिस स्वरूप को स्वीकार किया जा रहा है प्राचीन भारतीय ग्रंथों में जेंडर अवधारणा के तहत वर्णित ट्रांसजेंडर पहचान के स्वरूप में काफ़ी हद तक समानता पाई गई है। हम यह भी पाते हैं कि प्राचीन ग्रंथों में ट्रांसजेंडर पहचान के अंदर निहित स्वरूपों का जो वर्णन मिलता है वह काफ़ी विविधतापूर्ण है।

संदर्भ सूची

1. Apastambha. (2010). Apastambha [Sanskrit and Hindi]. In trans. by Dr. Naresh Kumar Acharya. Vidya Nidhi Prakashan.
2. Atharvaveda Samhita. (2009). Atharvaveda Samhita. In (ed. R. Roth and W.D. Whitney,Berlin 1856). GRETIL. http://gretil.sub.uni-goettingen.de/gretil/1_sanskr/1_veda/1_sam/avs_acu.htm
3. Atharvaveda-Samhita, Saunaka recension, ACCENTED TEXT. (n.d.). Retrieved December 1, 2020, from http://gretil.sub.uni-goettingen.de/gretil/1_sanskr/1_veda/1_sam/avs_acu.htm
4. Baudhyana. (2015). Baudhayana [Sanskrit and Hindi]. In trans. by Dr. Naresh Kumar Acharya. Vidyanidhi Prakashan.
5. Buhler, G. (2017). The Laws of Manu. Pinnacle Press.
6. Caraka Samhita. (2000, October 31). Caraka Samhita, 4 vols. (Sanskrit and English Edition) by Priya Vrat Sharma (2000-10-31) (New edition). Chaukhambha Orientalia, India.
7. Dharmasutras. (2000). Dharmasutras: The Law Codes of Apastambha, Gautama, Baudhayana, and Vasistha (Tr. Patrick Olivelle) (1st ed.). Motilal Banarsidass.
8. Jackson, P. A. (2013). Male Homosexuality and Transgenderism in the Thai Buddhist Tradition. Buddhism.Lib.Ntu.Edu.Tw. Retrieved March 3, 2018, from http://buddhism.lib.ntu.edu.tw/museum/TAIWAN/md/md08-52.htm
9. Kama Sutra. (1994). The Complete Kama Sutra. In (Tr. by Alain Danielou) (Original ed.). VT: Park Street Press.

10. Kautiliya Arthasastra. (2000). Kautiliya Arthasastra [Sanskrit and Hindi]. In trans. by Udayveer Shastri. Meharachand Lakshman Das Publication.
11. Naradasmriti. (2003). Naradasmriti (Tr. by R. W. Lariviere). Delhi: Motilal Banarsidass.
12. Patañjali: Vyākaraṇamahābhāṣya (GRETIL). (2020). Retrieved September 1, 2020, from http://gretil.sub.uni-goettingen.de/gretil/corpustei/transformations/html/sa_pataJjali-vyAkaraNamahAbhASya.htm
13. Reddy, G.(2005) With Respect to Sex: Negotiating Hijra Identity in South India. University of Chicago Press.
14. Satapatha-Brahmana 5. (n.d.). Retrieved September 9, 2020, from http://gretil.sub.uni-goettingen.de/gretil/1_sanskr/1_veda/2_bra/satapath/sb_05_u.htm
15. Shabd-kalp-drum(1967) by Raja Radha Kant Deva, Chowkhambha Sanskrit Series Office, Varanasi, Vol.-I-V.
16. Susruta, S. (2012). An English Translation of the Sushruta Samhita, Based on Original Sanskrit Text, Vol. 3 (Classic Reprint). Forgotten Books.
17. Vālmīki: Rāmāyaṇa (GRETIL). (n.d.). Retrieved November 3, 2019, from http://gretil.sub.uni-goettingen.de/gretil/corpustei/transformations/html/sa_rAmAyaNa.htm
18. Vatsyayan. (2008). Kamasutra [Sanskrit and Hindi]. In trans. by Parasnath Dwiwedi. Chaukhambha Surbhartati Prakshan.
19. Vedvyas. (n.d.). Mahabharat (Vols. 1–6) [Sanskrit and Hindi]. Gita Press Gorakhpur.
20. Yajnavalkyasmrti. (2004). Yajnavalkyasmrti of Yogisvara Maharsi Yajnavalkya. In Tr. by B.S. Bist. Chaukhamba Sanskrit Pratishthan.
21. Yajnavalkyasmrti. (2015). Yajnavalkyasmrti [Sanskrit and Hindi]. In trans. by Dr. Gangasagara Rai. Chaukhamba Sanskrit Pratishthan.
22. Yāska: Nirukta (GRETIL). (n.d.). Retrieved December 5, 2019, from http://gretil.sub.uni-goettingen.de/gretil/corpustei/transformations/html/sa_yAska-nirukta.htm
23. Zwilling, L., & Sweet, M. J. (1996). “Like a City Ablaze”: The Third Sex and the Creation of Sexuality in Jain Religious Literature. Journal of the History of Sexuality, 6(3), 359–384. Retrieved on 15 September, 2018 from http://www.jstor.org/stable/4629615